प्रथम अध्याय

"डॉ. वृन्दावनलाल वर्मा : व्यक्तित्व और कृतित्व"

अ) डॉ. वृन्दावनलाल वर्मा : व्यक्तित्व

प्रस्तावना --

लेखक के व्यक्तित्व का अध्ययन उसके साहित्य के अध्ययन में सहायक ही सिध्द होता है ।

हिन्दी साहित्य के प्रतिष्ठित ऐतिहासिक उपन्यासकार डॉ.वृन्दावनलाल वर्माजी हैं । साहित्यिक और विचारक के रूप में उनका स्थान मान्य है । उपन्यासकार प्रेमचंद, राष्ट्रकवि मैथिलिशरण गुप्त, महानेता नेहरूजी, महात्मागांधीजी आदि महापुरुषोंका समुचित असर आप की जीवन प्रणाली में देखा जा सकता है ।

वृन्दावनलाल वर्माजी के साहित्य में उनके जीवन की सूक्ष्मातिसूक्ष्म अभिव्यक्ति पाई जाती है । उनके साहित्य में उनके व्यक्तित्व की छाप विद्यमान है । वर्माजी के जीवन काल में समाज,धर्म,अर्थ,राजनीति आदि सभी क्षेत्रों में परिवर्तन होते रहते थे और उन परिवर्तन से वे प्रभावित हो गये । पहले से उनके परिवार में वंशपरम्परागत रूप से देश के प्रति भक्ति,वीर पुरुषों के प्रति श्रध्दा भावना थी । उनके साहित्य में भी यह सारी बात विद्यमान है । वर्माजी

के व्यक्तित्व के बारे में डॉ.मोहिनी सहाय कहती हैं कि --" साहित्यकार का व्यक्तित्व और कृतित्व परस्पर सापेक्ष होता है । साहित्य में साहित्यकार का सम्पूर्ण व्यक्तित्व जिसके अन्तर्गत उसकी अनुभूति, कल्पना, धारणा-विचारण आदि सबका समावेश होता है । अभिव्यक्त होता है ।" १ किसी भी साहित्यकार का साहित्य, साहित्य की परिधिसे पुष्ट होता है और संस्कार उसे शक्ति देता है । आज का हमारा जीवन तो न जाने कितने राजनीतिक,सामाजिक परिस्थितियों के उथल-पुथल, आर्थिक शोषण, जीवन मूल्यों के प्रति अनास्था कुण्ठाओंकी घुटन में कराह रहा है । डॉ.मोहिनी सहाय ठिकही कहती हैं --" वर्माजी का साहित्य सृजनकाल ऐसेही न जाने कितनी सामाजिक,सांस्कृतिक और राष्ट्रीय चेतनाओं के उथल-पुथल और संघर्षों में डूब-डूब रहा है । स्वाभावत: उनका साहित्य इन चेतनाओं और प्रवृत्तियों से अप्रभावित कैसे रहता ?" २ ऐसे समय में वर्माजी ने अपनी लेखनी से समाज मे एक क्रान्ति लाने की कोशिश की । ऐसा साधारण कहा जाता है कि वक्ता का परिचय उसके व्यक्तित्व से होता है, गायक की पहचान उसके सुरों को सुनने के बाद होती है, ठीक इसी प्रकार अगर किसी कृतिकार के व्यक्तित्व को पहचानना है,तो उनकी कृतियाँ ही व्यक्तित्व की पहचान होती है । किसी भी साहित्यकार को जानना उनकी कृतियों को समझना यों आसान काम नहीं है और वृन्दावनलाल वर्मा जैसे सशक्त,बहुमुखी,बहुचर्चित,प्रतिभा सम्पन्न व्यक्तित्व के बारे में तो क्या कहना ? प्रेमचंद के पहले भी ३०-३२ बरस हिन्दी उपन्यास लिखने की परम्परा आरम्भ हो गयी थी, किन्तु हिन्दी उपन्यास को अच्छी प्रतिष्ठा देने का गौरव डॉ.वृन्दावनलाल वर्माजी को प्राप्त है । डॉ.वृन्दावनलाल के व्यक्तित्व के बारेमें डॉ.मोहिनी सहाय कहती हैं --" वर्माजी ने अपने उपन्यासों में वर्तमानकालिक युग के प्रति साहित्यकार के दायित्व का निर्वाह किया है या नहीं ? साहित्यकार युग की सृष्टि और स्रष्टा दोनों होता है । उसका काम होता है साहित्य के माध्यम से युग को उद्बोधन स्वर देना, उसे नई स्फूर्ति , नई शक्ति, नई प्रेरणा देना और यह तभी संभव है जब साहित्यकार युग की स्थितियाँ, उसके आन्दोलनों, उद्वेलनों,हलचलों को सजग, सतर्क आँखों से देखे, परखे, उसका अध्ययन करे और समाज को उसके समाधान

का कोई रास्ता बतावे ।" [3] किसी भी व्यक्ति के लिए उसके सम्मुख उपस्थित वर्तमान का बहुत बड़ा महत्व हुआ करता है । वर्तमान से आँखे चुराकर, उसके संबंध विच्छेद कर कोई भी व्यक्ति जीवित जी नहीं सकता । वर्तमान का उसके ऊपर बहुत बड़ा ऋण हुआ करता है । स्वयं वृन्दावनलाल वर्माजी के शब्दों में " मेरा मत तो यथार्थ की कल्पना पर आधारित है ।" [4]

पारिवारिक जीवन संस्कार व्यक्तित्व के निर्माण में महत्वपूर्ण होते हैं । पारिवारिक जीवन जितना सशक्त है, उतनाही समकालिन वातावरण भी प्रभावी एवं सशक्त होता है, साथही व्यक्तिकी रुचियों, प्रवृत्तियों का प्रभाव भी समान रुप से होता है । घर का वातावरण आचार-विचार व्यक्तित्व के निर्माण में महत्वपूर्ण होते हैं । वस्तुत: व्यक्तित्व के निर्माण की प्रक्रिया बाल्यावस्था से ही आरम्भ होती है । व्यक्तित्व के धनी वृन्दावनलाल वर्माजी के व्यक्तित्व निर्माण में घरके संस्कारोंका महत्वपूर्ण योगदान रहा है ।

डॉ. वृन्दावनलाल वर्मा के सरल, स्वाभिमानी, देशभक्त, ओजस्वी व्यक्तित्व के निर्माण में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रुप से उनके जाति के कायस्थ, किन्तु कर्म से क्षत्रियोंचित परम्परा के धनी परिवार का योगदान महत्वपूर्ण रहा है । व्यक्तित्व निर्धारण में शारीरिक गठन, जन्म-संस्कार, कर्म-व्यापार, आचरण, मनन-चिन्तन आदि बातों का विश्लेषण करना हमारी कोशिश है ।

(१) जन्म –

डॉ. शशिभूषण सिंहलजी ने वर्माजी की जन्मतिथि इस तरह दी है - " जन्म उत्तर प्रदेश के बुन्देलखण्ड भू-भाग में, झाँसी से पूर्व-दक्षिण चालीस मील दूर स्थित, पुरखों के जन्मस्थान मऊरानीपुर में १ जनवरी १८८९ ई. (पौष शुक्ला अष्टमी संवत १९४५ वि.) को हुआ था ।" [5]

(२) परिवार --

परम्परागत और रुढिगत परिवार में वृन्दावनलाल वर्माजी का जन्म हुआ । उनके पिता का नाम अयोध्या प्रसाद और माता का नाम 'सुरानी'

था । अपने समय की सामान्य रीति के अनुसार वर्माजी का विवाह बारह वर्ष की आयु में ही हो गया था । उनके पत्नी का नाम था सरयुदेवी । उन्हें जो पत्नी मिली सेवा, प्रेम और त्याग की साक्षात लक्ष्मी जिन्होंने समय-समय में धैर्य के साथ सहयोग देकर घर को स्वर्ग बना दिया था ।" स्वयं वर्माजी के शब्दों में -" उनका जीवन साधना त्याग तपश्या का रहा है उनसे अपने जीवन में जो कुछ पाया वह अवर्णनीय है ।"[6] उनके पुत्र का नाम श्री सत्यदेव वर्मा था । उनके पिता झाँसी तहसिल में रजिस्ट्रार कानूनगो थे । माता वैष्णव थी, वह वर्माजी से पिता से अधिक प्यार करती थी । उनकी वात्सल्य और ममतामयी गोद में वर्माजी का जीवन बीता ।

वृन्दावनलाल वर्माजी को दादी-परदादी का भी प्यार और ममता मिली । वर्माजी को प्यार करनेवाले और एक व्यक्ति थे, उनके चाचा विहारीलाल जो ललितपुर में ज्वाईन्ट मॅजिस्ट्रेट थे । वे साहित्यप्रेमी थे और नित्य नई पुस्तके लाते और वर्माजी उन्हें पढते बैठते । उनकी माता की वैष्णव भावना महाभारत के अनुशीलन के रूप में व्यक्त होती थी । वर्माजी के परदादी ने झाँसी के रानी को कई बार देखा था । रानी लक्ष्मीबाई की वीरता सम्बन्धी कहानियाँ बालक वृन्दावनलाल ने दादी-परदादी के मुख से बार-बार सुनी थी, इन्हीं से सुने आल्हा, रामायण, महाभारत के भीम, अर्जुन, राम, कृष्ण आदि की कहानियों के शौर्यदीप्त ओजस्वी चरित्रों ने वृन्दावनलाल वर्मा के व्यक्तित्व और साहित्य को स्वाभिमान तथा तेजस्विता की भावना से अनुप्राणित किया ।

संघर्ष जीवन में मूलभूत आवश्यक है, इस दिशा में बच्चों की मानसिक और शारीरिक तौरपर तैयारी करना वर्माजी के पिता ने और परिवारवालोंने अपना कर्तव्य समझा । वर्माजी का परिवार संयुक्त परिवार था । इस परिवार की एक इकाई के रूप में उनके पिता-माता, दादी-परदादी, कई बहने और एक भाई था । भाई का नाम था रामलाल और नौकर का नाम हल्कू था ।

वर्माजी के परिवार के बारे में शशिभूषण सिंहल जी ने लिखा

है " वर्माजी का वंश जाति से कायस्थ किन्तु कर्म से क्षत्रिय रहा था । उनके पूर्व पुरुष महाराजा छत्रसाल के सैनिक थे । उनके प्रपितामह आनन्दराय मराठे के दिवान और फौजदार थे । सन् १८५७ में झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई की झण्डे नीचे अंग्रेज से वे लडे थे और अन्त में किसी अंग्रेज अफसर की गोली खाकर युध्द में ही उन्होंने प्राण विसर्जित किए थे । पितामह कन्हैयालाल विद्रोह-दमन के पश्चात अंग्रेजों के बन्दी रहे " [7] स्वाभावतः वर्माजी के परिवार में राष्ट्रप्रेम की भावना का घर करना उचित था, माता-पिता,परदादी,चाचा के परस्पर विरोधी स्वभाव और मिले-जुले संस्कारों से ही वृन्दावनलाल वर्माजी का व्यक्तित्व बना है ।

(३) <u>शिक्षा</u> --

वर्माजी के शिक्षा के बारेमें डॉ.मोहिनी सहाय ने कहा है " उनके विद्यागुरु झाँसी के पाठशाला के हेडमास्टर स्वर्गीय श्री विद्याधर दीक्षित थे । वर्माजी का शिक्षारम्भ उन्हीं की पाठशाला में हुआ " [8] पढने लिखने का शौक तो वर्माजी को बचपन से ही था । बाद में वे जिला स्कूल में अपने चाचा के साथ रहे । उन्होंने ललितपुर से मिडल परीक्षा पास की । सन् १९०९ में ग्वालियर के व्हिक्टोरिया कालिज में बी.ए.पास हुये । सन् १९१३ में आगरा कालिज में एलएल.बी.की परीक्षा दी । एक बार एलएल.बी की प्रथमा में अनुत्तीर्ण होने पर उनके मस्तिष्क में भीषण प्रतिक्रिया हुई थी और उन्होंने तत्क्षण संकल्प किया था एलएल.बी.और इतिहास परीक्षा साथ में देने का । स्वयं वर्माजी के शब्दों में " वकालत की परीक्षा पास कर भी वकालत न करूँगा, किसी कॉलेज में अध्यापकी करुंगा । फिर किसी दिन सब उनमें पैसे जोड लूँगा । इग्लैंड जाकर इतिहास में डाक्टरी पास करूँगा और हिन्दी में ऐसा लिखूँगा कि हाँ " [9] फिर इतिहास में एम.ए.किया और एलएल.बी.परीक्षा भी पास हो गये । सन् १९५८ में आगरा विश्वविद्यालय ने वर्माजी को डी.लिट.उपाधि देकर सम्मानित किया ।

(४) <u>नौकरी</u> ---

वर्माजी ने मैट्रिक के बाद झाँसी में पिता के इच्छानुसार रजिस्ट्रार के कार्यालय में नौकरी की । उन्होंने छोटी-मोटी २-३ बार नौकरी की और रिश्वत लेना पसन्द न होने के कारण छोड दी ।

सरकारी दफ्तरों में फैली हक्दस्तूर की प्रथा से उन्हें बेहद घृणा हुई । वर्माजी के शब्दों में " जब घर पहुँचा दिमाग में एक तूफान था । तो क्रान्तिकारी मुंशीजी बनकर रिश्वत लेने लगा । जीवन भर यही करता रहेगा!![10] बाद में उन्हें जंगल मुहकमे के दफ्तर में पचीस रुपये मासिक वेतन में नौकरी मिली । सात महीने के बाद १९०९ में स्वेच्छापूर्वक नौकरी छोडी आगे की शिक्षा प्राप्ति के कारण ।

जब वर्माजी की सन १९१३ में आगरा कॉलेज में पढाई जारी थी, तब उन्होंने परिश्रमी छात्रों के भाँति ट्यूशन करके अपनी पढाई जारी रखी । फिर मुफिद आमहाईस्कूल में तीन सप्ताह तक तीस रुपये की नौकरी की । बाद में १६ अगस्त १९१६ में वकालत आरंभ की । इस बीच वर्माजी ने १९१४ में " जय-विजयंति " नामक साप्ताहिक पत्र का सम्पादन किया । माखनलाल चतुर्वेदी द्वारा सम्पादित " प्रभा " में भी वे लिखा करते थे ।

सन १९१७ में जब वकालत जोरों से चल रही थी, तब उनके मन में संघर्ष खडा हुआ । अँग्रेजों द्वारा लिखित इतिहास का खंडण करने का बचपन का संकल्प उनकी आँखों के सामने आया । बुन्देलखण्ड के गौरव को मूर्त करने की लालसा प्रबल हुई और वर्माजी ने सन १९२१ में " स्वाधीन " साप्ताहिक का प्रकाशन किया ।

(५) <u>मित्रता</u> --

वृन्दावनलाल वर्मा एक सच्चे मित्र थे । उनके मित्रों की तादात बहुत बडी थी । परिवार के सदस्य के अतिरिक्त श्री मैथिलीशरण गुप्त,रामकृष्ण - दास, प.बदरीनाथ भट्ट,बनारसीदास चतुर्वेदी, लक्ष्मीधर वाजपेयी ,बालकृष्ण

शर्मा (नवीन) , माखनलाल चतुर्वेदी, पं.गणेश शंकर विद्यार्थी, तुलसीदास व्यास, कविवर सत्यनारायण, श्यामचरण रॉय (वर्माजी के बहन का पति) बालाप्रसाद वर्मा (रिश्तेदार) अयोध्यानाथ शर्मा, करामत खाँ, पं.फुलचंद्र पुरोहित, नौकर हक्कू, गायनाचार्य पलुस्कर आदि मित्रों आप्तजनों की घनिष्टता ने वर्माजी के जीवन को अच्छी संगति और साहित्यिक वातावरण प्रदान करने में बहुत सहायता दी और इसमें उनका व्यक्तित्व प्रौढ हुआ ।

(६) शौक --

वृन्दावनलाल वर्माजी को बचपण से ही लाठीचलना,प्रणयन,भ्रमण, दण्डबैठक, शिकार खेलने, घुडसवारी,हॉकी,फुटबॉल,क्रिकेट खेलना ,तैरना आदि शौक थे । वर्माजी बचपण से ही मस्तिष्क की भाँती शरीर के निर्माण पर भी ध्यान दिया करते थे । कुस्ती और व्यायाम से बलिष्ट शरीरवाले वर्माजी को इसी कारण छ शेर दूध और आधा सेर जलेबी एक समय में, एक बार में खा-पीकर पचा जाने में कठिनाई नहीं होती थी । जब वे लक्ष्मिपुर बोर्डिंग हाऊस में रहते थे, तब वे इतनी कसरत करते थे, कि जाडों के दिनों में भी उनको कपडों की जरूरत नही पडती । वह एक समय पांचसौ डंड और पांच सौ बैठक लगाते थे । स्वंय उनके शब्दों में " अभिष्ठ था पाँच सौ डंड और पांच सौ बैठकों का । गाँव बाहर खेरी नदी की ऊँची ठौर पर एक पुराने नीम के नीचे पुराने युग का अखाडा था । एक कसरती मित्र प.तुलसीदास व्यास,जो उमर में मुझसे बडे थे, मिल गये । तीन चार बजे रात के बीच मुझे जगा ले जाते थे । खेरी नदी में नहाया और सूर्योदय होते होते अभिष्ट सिध्द किया - पांच सौडंड और पांच सौ बैठक ।" [११] शिकारी भी वे अव्वल दर्जे के थे । बिना शिकार किये उनके पेट का अन्न जैसे पचता ही नही था । स्वंय वर्माजी के शब्दों में " जब प्राण संकट बिलकुल सामने होता है, तब भय भीतर नही रहता । जब वह दूर होता है, तब उसके नाना प्रकार के छोटे बडे और अधिकतर विकृत रूप कल्पना में आते हैं और विभीषिका उत्पन्न करते हैं । जब सामने आ जायेगा, तब उसका भरकस मुकाबला करेंगे फिर जो होना हो,ऐसा होता है ।" [१२]

वर्माजी को घूमने का शौक होने के कारण प्राचीन इतिहास,बुन्देलखण्ड की रंग-रंगीली प्रकृति के नूतन सौन्दर्य रहस्यों से वे घनिष्ठ रूप से परिचित हुये। वर्माजी घुमक्कड प्रकृति के थे । भ्रमण के कारण वे बुन्देलखण्ड,मध्यप्रदेश के पहाडों,नदियों,झीलों, तालाबों,मन्दिरों,मठों,जंगलों,मैदानों के एक-एक कण परिचित हैं । कचहरी का काम समाप्त करते ही वह बन्दूक लेकर साईकिल से १०-१२ मील दूर जंगल में जाते थे । गरौठ में अपने चाचा से उन्होंने लाठ चलाना, तलवार चलाना सीखा ।

कॉलेज जीवन में भी वे क्रिकेट और फुटबॉल टिम के सदस्य रहे हैं । झाँसी में अपने साथी तुलसीदास के साथ कुश्ती करना उनका दैनिक नित्यक्रम था । वे संगीत के भी प्रेमी थे, सितारवादन उनका शौक था । उनके " मृगनयनी,के पात्र गायक बैजनाथ और माधवजी सिन्धिया " के पात्र" मन्ना बेगम " गायन कला में निपुन हैं । यहाँ उन्होंने अपनी संगीत ज्ञान का उपयोग किया हैं ।

अध्ययन,प्रणयन और भ्रमन के कारण उनकी ज्यादातर कृतियों में युध्द, शिकार और प्रकृति वर्णन मिलते हैं ।

(७) सेवाभावी वर्मा --

वृन्दावनलाल वर्माजी सेवाभावी व्यक्ति थे । बचपन से ही वर्माजी ने विद्यार्थी जीवन में समाज सेवा करना शुरु किया था । झाँसी में १९१८ में " इनफ्लूएन्जा " की बीमारी फैली हुयी थी, तब उन्होंने पीडित हुये लोगों की सेवा की और लाश ढोने का कार्य किया । उस समय के अपने उत्साह की चर्चा करते हुए उन्होंने लिखा हैं -" वन्देमातरम् " कहते कहते लाश ढोते थे - " राम नाम सत्य हैं" की अपेक्षा उससे अधिक स्फूर्ति मिलती थी ।" [१३] जालियनवाला बाग हत्याकाण्ड १९१९ का उनके प्रतिरूप स्वरूप अपने मित्र बाबू राजनारायण सक्सेना के सहयोग से शहर में हरताल करायी । खिलाफत आन्दोलन का भी उन्होंने विरोध किया था ।

हिन्दुस्थान में जो अंधश्रध्दायें,जात-पाँत, रूढियाँ,अस्पृश्यता,छुआछूत

जो समाज के हित के लिए बाधक थे, उनको उन्होंने तोड़नेकी कोशिश की। वे कुण्ठाग्रस्त उत्पीड़ित समाज को सहानुभूति की नजर से देखते थे। उन्होंने सच्ची घटनाओं के तथ्या-तथ्य को कथाओं के माध्यम से सम्मुख उपस्थित किया। डॉ.वर्मा जी एक जगह कहते हैं " मानव का प्राण दवा या दवाखाने से कहीं बढ़कर है।" [१४]

(८) साहित्य सृजन की प्रेरणा —

वर्माजीके वंशज १८५७ में झाँसी में लक्ष्मीबाई के झंडे के नीचे लड़े थे, उनके पुत्र कन्हैयालाल को भी अंग्रेजों ने बन्दी बनाया। पूर्वजों की शौर्य कथा अपनी दादी-परदादी से सुनी, तब उसपर काफी असर पड़ा था। आगे ऐतिहासिक उपन्यास लिखने की प्रेरणा उसीसे मिली।

वर्माजी ने बचपन से पढ़ने का शौक होने के कारण चाचा के पास बंगला में अनुदित 'अंशुमती' नाटक पढ़ा। उसमें लिखा था कि अंशुमती राणाप्रताप की पुत्री थी, उसका प्रेम अनजाने ही अकबर पुत्र सलीम से हो गया। जब उसे मालूम हुआ कि सलीम कौन है, तब वह विरक्त हो गयी। यह बात वर्माजी को बहुत खटकी और उन्होंने अपना संदेह चाचा को बताया। चाचा ने बताया " राणाप्रताप की कोई पुत्री उस लड़ाई के समय थी नहीं और सलीम तो बहुत छोटा था। पुस्तक में बहुत-सी बेतुकी बातें हैं। क्यों? लिखनेवाले ने ऐसा क्यों लिख मारा? बहुत से लोग ऐसा गलत सलत लिख डालते हैं? मैं ऐसा गलत सलत नहीं लिखूँगा।" [१५] पाँचवी कक्षा में उन्हें विदेशी इतिहासकार ई मार्सडेन रचित 'भारत का इतिहास' पढ़ने को मिला था। उसमें वर्णित तथ्यों से उनके बचपन में दादी-परदादी से सुनी भारत के शौर्य की कहानियों से पड़े संस्कार को धक्का लगा था। इतिहास के अध्ययन की रुचि इनमें उसी समय से जगी थी। नवी कक्षा में इतिहास की एक पुस्तक पढ़ी इसमें पहले भारतियों के शौर्य की निन्दा की गई थी और इसमें प्रशंसा। विचार की इस प्रकार की भिन्नता से उसमें सही बात जानने की प्रेरणा मिली। उसी समय उन्हें " What Indian can teach us ",

पुस्तक पढने को मिली । उस समय उन्हें वाल्टर स्काट के दो उपन्यास 'आई वेन हो' और 'टैलिस्मैन' पढने को मिले । इसने उनकी इच्छा गति दिशा को निश्चित कर दिया । स्वयं वर्माजी के शब्दों में "अच्छी तैयारी के बाद ऐतिहासिक उपन्यास लिखूँगा ।"[१६] उनके मनमें यह धारणा बैठ गई कि इतिहास संबंधी भूगोल का निरीक्षण किये बिना ऐतिहासिक उपन्यास नहीं लिखना चाहिए । इससे वर्माजी को ऐतिहासिक उपन्यास लिखने की प्रेरणा मिली ।

एक पंजाबी मित्र के यहाँ पार्टी में बुन्देलखण्ड की बुराई के बारेमें सुना तो वर्माजी को बहुत दुख: हुआ । स्वयं वर्माजी के शब्दों में 'जिस भूमिने मेरे माता पिता को जन्म दिया, जहाँ लक्ष्मीबाई का पराक्रम प्रकट हुआ, जिस भूखंड में चन्देले और उनके बाद छत्रसाल हुये वह कमबख्त । जहाँ के आदमियों का आल्हा सब जगह गाया जाता है, जिन्होंने औरंगजेब के और फिर अंग्रेजों के दांत खट्टे किये वे मरियल सडियल !! और जानवरों से भी बदतर !!! दिनरात पसीना बहाकर जो अन्नों से लदते रहते हैं वे इनके मजाक की चीज !!!.... उस दिन से बुन्देलखण्ड की एक एक कंकडी, एकएक बूंद, एक एक गाली और कली मन में रमने लगी ।"[१७] इसी लिए बुन्देलखण्ड के प्रति उनमें आकर्षण निर्माण हुआ और बुन्देलखण्ड को उन्होंने अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया । डॉ.शशिभूषण सिंहल के मतानुसार 'बुन्देलखण्ड में रमने से वर्माजी को देश की मिट्टी को पहचानने और उसके जीवन को हृदयंगम करने की शक्ति मिली है ।'[१८]

निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि बुन्देलखण्डी जन-जीवन,उसकी संस्कृति और युगिन वातावरण ने वर्माजी को साहित्य साधना की प्रेरणा दी । डॉ.मनमोहन सहगल ठिक ही कहते हैं — 'वृन्दावनलाल वर्मा का अध्ययन का विषय जनसाधारण है, इसलिये उनके उपन्यासों मे लोक जीवन के मनोरथ चित्र तथा बुन्देलखण्ड का अंचल उभर आये है ।'[१९]

(९) मृत्यु --

" डॉ. वृन्दावनलाल वर्माजी की इहलोक यात्रा अस्सी वर्षों की आयु में २३ फरवरी १९६९ को सम्पन्न हुई । "[२०] वर्माजी अन्तिम समय तक रचना-रत रहे थे । उन्हें अपने जीवन काल में साहित्यिक रूप में देश में समय-समयपर सम्मान प्राप्त हुए हैं ।

ब) डॉ.वृन्दावनलाल वर्मा : कृतित्व --

प्रस्तावना --

डॉ.वृन्दावनलाल वर्माजी मुख्यत: ऐतिहासिक उपन्यास कार हैं । इनके सभी ऐतिहासिक उपन्यासों में सामाजिक यथार्थ की उद्भावना ही चित्रित हुई हैं । इनके उपन्यासोंमें सामाजिक अत्याचारों ,रूढियों,आदर्श राजा, नारी प्रेरणा के रूप में दाम्पत्य जीवन आदि का वर्णन और मुसलमान शासन काल का वर्णन हैं । उपन्यास के सभी तत्वोंपर उनकी कला खरी उतरती हैं । अर्थात वस्तु-विन्यास,पात्र-योजना,संवाद-योजना,देशकाल,चरित्र-चित्रण,भाषा तथा उद्देश्य एवं संदेश की दृष्टि से उनके उपन्यास सफल हैं ।

उनके उपन्यासों की अनेक विशेषताएँ हैं । जन-चेतना जगाने का प्रयास, सामाजिक चेतना का ऐतिहासिक मूल्यांकन, व्यष्टि-समष्टि में सामंजस्य की महत्ता, मानवीय मूल्यों की आस्था आदि दृष्टि से उनके उपन्यास श्रेष्ठ हैं । उनकी उपन्यास कला एक पूर्ण निजत्व से संपन्न हैं । शास्त्रीय एवं व्यवहारिक पक्षों का पालन, निर्वाह उसमें पूर्ण सफलता से हो पाया है । उनके उपन्यास कठिन से सरलता की ओर अग्रेसर होते हैं । दृष्टि सर्वत्र मानवीय है, जो उनके पात्रों को रूप आकार प्रदान करती हैं । भाषा,भावना,विचार-अभिव्यक्ति, चरित्र-निर्माण आदि पर उनके अपने उन्मुक्त व्यक्तित्व की छाप स्पष्ट हैं ।

इन सभी विशेषताओंके कारण हिन्दी ऐतिहासिक साहित्य में उनका स्थान दिशासूचक बन चुका हैं ।

डॉ.वृन्दावनलाल वर्माजी का साहित्य अंभार इस प्रकार है ---

१) ऐतिहासिक उपन्यास ---

१) गढ़ कुण्डार	सन १९२७
२) विराट की पद्मिनी	सन १९३३
३) मुसाहिब जू	सन १९४०
४) कचनार	सन १९४६
५) झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई	सन १९४६
६) माधवजी सिन्धिया	सन १९४८
७) जौति आग	सन १९४८
८) टूटे काँटे	सन १९४९
९) मृगनयनी	सन १९५०
१०) भुवन विक्रम	सन १९५५
११) अहिल्याबाई	सन १९५५
१२) महारानी दुर्गावती	सन १९६१
१३) रामगढ़ की रानी	सन १९६१

सामाजिक उपन्यास ---

१) लगन	सन १९२७
२) संगम	सन १९२७
३) प्रत्यागत	सन १९२७
४) कुण्डली चक्र	सन १९२८
५) प्रेम की भेंट	सन १९२८
६) अचल मेरा कोई	सन १९४७
७) अमरबेल	सन १९५२
८) आहत	सन १९६०
९) कभी न कभी	सन १९४२

१०) उदय किरण — सन १९६०

११) दुर्गावती — सन १९६१

१२) सोती आग — सन १९६१

१३) देवगढ़ की मुस्कान — सन १९६३

१४) कीचड़ और कमल — सन १९६३

१५) ललितादित्य — सन १९६४

१६) अब क्या हो — सन १९६२

२) **कहानी संग्रह —**

१) कलाकार का दण्ड — सन १९४३

२) शरणागत — सन १९५५

३) तोषी — सन १९५०

४) अँगूठी का दाम — सन १९५७

५) ऐतिहासिक कहानियाँ — सन १९५७

६) मेंढकी का ब्याह (व्यंग्यात्मक कहानी संग्रह) — सन १९६०

७) दबे पाँव (आपबीती शिकारी कहानियाँ) — सन १९६२

८) अम्बपुर के अमर वीर (ऐतिहासिक कहानियाँ) — सन १९५९

९) शिकार — सन १९६५

१०) राजपूत की तलवार — सन १९०९

३) **ऐतिहासिक नाटक —**

१) हंस मयूर — सन १९५०

२) पूर्व की ओर — सन १९५०

३) फूलों की बोली — सन १९५१

४) जहाँदारशाह — सन १९५१

५) बीरबल — सन १९५३

६) ललित विक्रम — सन १९५३

७) काश्मीर का काँटा — सन १९४७

८) झाँसी की रानी — सन १९४७

<u>सामाजिक नाटक</u> --

१) राखी की लाज — सन १९४७

२) बाँस की फाँस — सन १९५०

३) पीले हाथ — सन १९५०

४) केवट — सन १९५१

५) नील कण्ठ — सन १९५१

६) सगुण — सन १९५१

७) मंगलसूत्र — सन १९५२

८) खिलौने की खोज — सन १९५२

९) देखादेखी — सन १९५६

१०) लोभाई पंचा लो — सन १९५०

११) हृदय की हिलोर — सन १९६२

४) <u>एकांकी</u> --

१) कनेर — सन १९५१

२) लालकमल — सन १९६५

५) <u>पत्र-पत्रिकाओं का सम्पादन लेखन</u> ---

वृन्दावनलाल वर्माजी ने अपने जीवन काल में सन १९१४ में जय जिमौति नामक साप्ताहिक का सम्पादन किया, सन १९२१ में स्वाधीन साप्ताहिक का प्रकाशन शुरू किया । माखनलाल चतुर्वेदी द्वारा सम्पादित ` प्रभा ` में भी वे हमेशा लिखते रहते थे । उनकी रचनाएँ ` सरस्वती ` तथा ` सुधा ` नामक पत्रिकाओं में भी प्रकाशित होती रहती थी । वे ` वेंकटेश्वर ` समाचार पत्र में भी लिखा करते थे ।

६) पुरस्कार --

वृन्दावनलाल वर्माजी को मिले पुरस्कारों की सूची इस प्रकार है --

१) नेहरू पुरस्कार सन १९६५

२) भारत सरकार - पद्मभूषण सन १९६८

३) डालमियाँ पुरस्कार (हरजीमल)-राशि-२१००

४) साहित्यकार संसद पुरस्कार(प्रयाग)राशि-१०००

५) उत्तर प्रदेश राज्य पुरस्कार(शाहू जगदिश प्रसाद)राशि-१०००

६) उत्तर प्रदेश राज्य पुरस्कार - राशि - (१०००)

७) मध्य भारत राज्य पुरस्कार - राशि - (१०००)

८) नागरी प्रचारणी सभा का महावीर प्रसादर स्वर्णपद और राशि - २५०

९) भारत सरकार का प्रथम पुरस्कार - राशि - २०००

१०) हिन्दुस्थानी एकेडमी - राशि (५००)

११) नाटक इंडियन प्रेस इलाहाबाद - राशि ५०

अपने जीवन काल में वृन्दावनलाल वर्माजी ने उपर्युक्त पुरस्कार पाये हैं। उपर्युक्त पुरस्कारों में से डालमियाँ पुरस्कार,साहित्यकार संसद पुरस्कार, उत्तरप्रदेश राज्य पुरस्कार,मध्यभारत राज्यपुरस्कार,हिन्दुस्थानी एकेडमी पुरस्कार और नागरी प्रचारणी सभा का महावीर प्रसाद स्वर्णपद वृन्दावनलाल वर्माजी को मृगनयनी उपन्यास को प्राप्त हुए हैं। निष्कर्ष के रूप में मेरी यह धारणा है कि वर्माजी को मृगनयनी उपन्यास के लिए ही सबसे ज्यादा पुरस्कार मिले हैं।

इस प्रकार वर्माजी का साहित्य भंडार व्यापक है, जिसके कारण वे हिन्दी साहित्य में प्रतिष्ठित हो चुके हैं।

निष्कर्ष ---

डॉ.वृन्दावनलाल वर्माजी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के अध्ययन के उपरान्त मैं इस निष्कर्ष तक पहुँच चुका हूँ कि जिस परिवार में वृन्दावनलाल वर्माजी का जन्म हुआ, वह परिवार राष्ट्रप्रेम की भावना से ओतप्रोत था । उनके दादा-परदादा झाँसी की रानी के झण्डे के नीचे अंग्रेजों के विरोध में लड चुके थे । स्पष्ट है कि देशप्रेम के संस्कार उन्हें विरासत के रूप में ही प्राप्त हुये । वर्माजी का अधिकांश जीवन काल शिकार खेलने में, ऐतिहासिक स्थानों का भ्रमण करने में,झीलों,नदियों,पहाडों को धूम-धाम से देखने में बीता है । उन्होंने अपने पूर्वजों की शौर्य कथा अपनी दादी-परदादी से सुनी थी, बुन्देलखण्ड , झाँसी (दतिया) आदि प्रदेश और वहाँ का जन-जीवन,गौरवपूर्ण इतिहास और संस्कृति उनके जीवन का अभिन्न अंग बन गये थे । दूसरी ओर अंग्रेजों द्वारा लिखा हुआ भारत का झूठा इतिहास भी उन्होंने पढा था । फलस्वरूप यहाँ की उज्ज्वल संस्कृति और इतिहास को उन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से प्रकट करना चाहा । इन कारणों से वर्माजी का ऐतिहासिक उपन्यास लिखने की प्रेरणा मिली और वे लगातार लिखते चले गये । वर्माजी सेवाभावी स्वभाव के लेखक रहे हैं । हिन्दुस्थान में अन्धश्रद्धाएँ जाति-पाँति के बन्धन,रूढि-परम्परा, छुआ-छूत से समाज ग्रस्त था, इन सबको उन्होंने तोडने की कोशिश की है । उत्पीडित समाज को उन्होंने सहानुभूति की नजर से ही देखा है । ऐतिहासिक उपन्यासों के साथ-साथ उन्होंने सामाजिक उपन्यास नाटक ,कहानी तथा एकांकी आदि का भी लेखन किया है । विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में वे लिखते रहे हैं। अपने जीवन काल में वर्माजी को साहित्य कृति के लिए कई पुरस्कार प्राप्त हुये हैं किन्तु सर्वाधिक पुरस्कार उन्हें `मृगनयनी` उपन्यास को प्राप्त हुये हैं । मेरा यह निष्कर्ष है कि `मृगनयनी` वृन्दावनलाल वर्माजी की सर्वश्रेष्ठ रचना है । अपने उच्च कोटि के उपन्यासों की बदौलत वे न केवल प्रतिभा सम्पन्न उपन्यासकार हैं अपितु हिन्दी उपन्यास साहित्य की एक प्रबल शक्ति के रूप में हैं ।

सन्दर्भ सूची

१) वृन्दावनलाल वर्मा का उपन्यास साहित्य - डॉ. मोहिनी सहाय-पृ. ६७ ।

२) - वही - - वही - पृ. ६८ ।

३) - वही - - वही - पृ. १३ ।

४) अपनी कहानी - वृन्दावनलाल वर्मा - वही - पृ. २०९ ।

५) उपन्यासकार वृन्दावनलाल वर्मा - शशिभूषण सिंहल - पृ. १८ ।

६) अपनी कहानी - वृन्दावनलाल वर्मा - - वही - पृ. २६७ ।

७) उपन्यासकार वृन्दावनलाल वर्मा - वही - पृ. २४ ।

८) - वही - वही - पृ. ७१ ।

९) अपनी कहानी - वृन्दावनलाल वर्मा पृ. ६५-६६ ।

१०) -वही - वही पृ. ३७ ।

११) वही - वही पृ. २१-२२

१२) वही - वही पृ. १८८

१३) वही - वही पृ. ८१

१४) वही - वही पृ. १६८

१५) वही - वही पृ. ५

१६) वही - वही पृ. २६

१७) वही - वही पृ. २६ ।

१८) उपन्यासकार वृन्दावनलाल वर्मा - डॉ. शशिभूषण सिंहल-पृ. २५ ।

१९) हिन्दी उपन्यास के पदचिन्ह - डॉ. मनमोहन सहगल - पृ. २३ ।

२०) उपन्यासकार वृन्दावनलाल वर्मा - डॉ. शशिभूषण सिंहल -पृ. २१ ।